भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दीके उपलक्ष्यमें

स्वामिनारायण परिचय पुस्तकमाला-पुष्प : १

भगवान स्वामिनारायण

श्री हरीन्द्र दवे

बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्था प्रकाशन

भगवान स्वामिनारायण

भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दी के उपलक्ष्यमें

स्वामिनारायण परिचय पुस्तकमाला : पुष्प-१

भगवान स्वामिनारायण

लेखक

श्री हरीन्द्र दवे

: प्रकाशक :

बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्था
शाहीबाग रोड, अहमदाबाद-३८०००४

प्रकाशक :

प्रगट ब्रह्मस्वरूप

स्वामीश्री नारायणस्वरूपदासजी - प्रमुख स्वामी

अध्यक्ष,

भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दी

प्रकाशन समिति

बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्था

शाहीबाग रोड, अहमदाबाद–३८०००४

*

*

प्रथम आवृत्ति : ५०००

अगस्त, १९७९

*

मूल्य : ००–६०

*

प्राप्तिस्थान :

श्री अक्षरपुरुषोत्तम मंदिर,

* शाहीबाग रोड, अहमदाबाद ३८०००४
* स्वामी ज्ञानजीवनदास मार्ग
  स्वामिनारायण चौक, दादर (C.R.) बम्बई ४०००१४
* नाणावट, सुरत
* अटलादरा, वडोदरा
* भाईकाका मार्ग, विद्यानगर
* रजपूतपरा, शेरी नं. ४, राजकोट
* लाती बजार, भावनगर
* ६१, चक्रबेरिया रोड (नोर्थ), कलकत्ता २०

तथा गोंडळ, भादरा, गढडा, सारंगपुर, बोचासण, सांकरी आदि संस्थाओंके मंदिरोंमें.

मुद्रक : साधना प्रिन्टरी, घीकांटा रोड

नोवल्टी सिनेमाके सामने, अहमदाबाद–३८०००१

कृपामृत

भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दीके अवसर पर उनके दिव्य जीवन एवं कार्यसे विशाल जनसमुदाय अवगत हो, इस उद्देश्यसे संस्थाकी प्रकाशन समितिने प्रकाशनोंकी एक विस्तृत योजना बनाई है । जिसके द्वारा उनके जीवन एवं कवन–वचनामृतों–को विविध भाषाओंमें समाविष्ट करके प्रकाशित करनेका निर्णय किया गया हैं । इस मौके पर उनके एकान्तिक भक्तोंको कैसे भुलाया जा सकता है ? उनके भक्त सन्त–कवियोंने मध्यकालीन गुजराती–हिन्दी साहित्यमें महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है । गुजराती–हिन्दी साहित्यके लब्ध-प्रतिष्ठ कवि औरलेखकोंके द्वारा उनकी कृतियोंका मूल्यांकन करनेवाली पुस्तकश्रेणी प्रकट करनेका भी प्रकाशन समितिने निर्णय किया है ।

इन प्रकाशनोंसे आजके साहित्यप्रेमी, अभ्यासी, जिज्ञासु जनसमुदायको संस्कारी साहित्य पढनेका सुअवसर मिलेगा।

इन प्रकाशनोंमें जिन लेखकोंने सहयोग दिया है, उन्हें भगवान स्वामिनारायण, अनादि अक्षरमूर्ति श्री गुणातीतानन्द स्वामी, स्वामीश्री यज्ञपुरुषदासजी (शास्त्रीजी महाराज), स्वामी श्री ज्ञानजीवनदासजी (योगीजी महाराज) कृपान्वित करें, यही शुभ कामना ।

इस पुस्तकके लेखक श्री हरीन्द्र दवेजीका भी प्रकाशन समितिकी ओरसे हम कृतज्ञता व्यक्त करते हैं ।

शास्त्री नारायणस्वरूपदास
(प्रमुख स्वामी)
के जय श्री स्वामिनारायण
(अध्यक्ष : भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दी महोत्सव समिति)

अक्षर मन्दिर,
गोंडल (सौराष्ट)

प्रकाशकीय निवेदन

स्वामिनारायण धर्मका तत्त्वज्ञान, साहित्य, संस्कृति, कला, इतिहास आदि विविध विषयों पर अलग अलग छोटी पुस्तिकाओंका प्रकाशनकार्य बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्था द्वारा भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दीके उपक्रममें शुरू हुआ है।

व्यस्त और यांत्रिक युगका आधुनिक मानव कम से कम शब्दों में और कम से कम समय में ज्यादा से ज्यादा जानकारी प्राप्त करना चाहता है। इस विचारको दृष्टि समक्ष रखकर सरल, सुबोध, रोचक शैलीमें इस पुस्तिकामालाका प्रारंभ करते हुए हम यह आशा रखते हैं कि प्रत्येक जिज्ञासु को इन पुस्तिकाओंके द्वारा स्वामिनारायणधर्मसे परिचित करानेका हमारे इस प्रयासका समाजमें आदर होगा। मूल गुजराती-पुस्तिकाका यह हिन्दी अनुवाद है।

सीमित पृष्ठों में इस गहन विषयका सांगोपांग विवेचन संभव नहीं है। वाचकवर्ग इस प्रयत्नको परिचयात्मक ही समजे और विषयकी गहराईको यदि जाननेकी भूख पैदा हो तो तत्संबंधी विशाल साहित्य देखें।

इस पुस्तिकाके लेखक श्री हरीन्द्र दवेजी और दूसरे भी साथी सहयोगियोंकी ओर अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए, और धार्मिक साहित्यप्रेमी विशाल वाचकवर्ग हमारे इस प्रयत्नको उचित सराहना करके हमें प्रोत्साहित करेंगे ऐसी आशा सह...

— प्रकाशन समिति

'हरीन्द्र दवे'

'मौन' आदि काव्यसंग्रहों एवं 'माधव क्यांय नथी' आदि उपन्यासोंके सर्जक, 'अमेरिकन समाचार कचहरी' के गुजराती विभागके भूतपूर्व सम्पादक, 'भारतीय विद्या भवन' के पाक्षिक पत्र 'समर्पण' के सम्पादक एवं गुजराती दैनिक पत्र 'जनशक्ति'के तंत्री।

भगवान स्वामिनारायण

स्वामीश्री रामानंदने सं. १८५७ की प्रबोधिनी एकादशी के पवित्र दिन को युवान तपस्वी नीलकंठ वर्णी को भागवती दीक्षा दी और उनका नाम रखा 'स्वामी सहजानंद'।

उसके बराबर एक साल के बाद उन्होंने स्वामी सहजानंद को जेतपुर में अपनी गद्दी के आचार्य पद पर आसीन किया और संप्रदाय की धर्मधुरा उनके हाथोंमें सौंप दी। इस प्रसंग पर उन्होंने स्वामी को दो वरदान माँगने को कहा। श्री सहजानंद स्वामीने माँगा :-

(१) 'आपके सत्संगी को एक बिच्छू काटने का दुःख होनेवाला हो तो वह उसको न होकर मुझे एक एक रोंगटेमें कोटि कोटि बिच्छू काटने का दुःख हो। और-

(२) आपके सत्संगी के प्रारब्धमें भिक्षापात्र लिखा हो तो वह उसे न मिलकर मुझे मिले; लेकिन आपका सत्संगी अन्नवस्त्रसे दुःखी न हो। इस प्रकार ये दो वरदान मुझे दीजिये।'

स्वामी सहजानंद के जीवन को और उनके द्वारा संस्थापित स्वामिनारायण धर्मको समझाने की चाभी इन दो वरदानों में है। ऐसे वरदान माँगनेवाले का ऐश्वर्य कितना विराट होगा? ऐसे ऐश्वर्यको देखकर ही स्वामी रामानंदने बीस साल के युवान सहजानंदको आचार्य पद दिया और स्वामी मुक्तानंद आदि अपने वरिष्ठ शिष्योंको सहजानंद का अनुसरण करने की आज्ञा दी।

प्राकट्य की कथा

स्वामी रामानंद जिस संप्रदायके आचार्य थे, वह उद्धव संप्रदायके नामसे पहचाना जाता था। उस विषयमें एक कथा कुछ ऐसी है।

बदरिकाश्रम में श्री नरनारायण के दर्शनके लिये कुछ ऋषि एकत्रित हुए थे। श्री नारायणके मातापिता मूर्तिदेवी और धर्मदेव तथा उद्धवजी भी वहाँ उपस्थित थे। उस समय श्री नारायण ऋषि भरतखंडके वृत्तांत की बातें सबको सुना रहे थे और वह सुनने में सभी तल्लीन थे।

ठीक उसी समय दुर्वासा ऋषि वहाँ आ पहुँचे। सब नारायण ऋषि के वार्तालाप में लीन थे। इसीलिए उनके आने का किसी को पता न चला। अत एव किसीने उनका सत्कार न किया। ऋषि दुर्वासा याने कोप, और शाप तो मानों उनका दूसरा स्वभाव। उन्होंने कहा, 'मेरा अपमान करनेवाले तुम सब भरतखंड में मनुष्य का रुप प्राप्त करो एवं असुरों के द्वारा अपमान और कष्ट पाओ।'

दुर्वासा जितने शीघ्र-कोपी थे उतने ही वे जल्दी रीझनेवाले भी थे। उन्होंने शाप के साथ तुरंत अनुग्रह किया कि 'हे धर्मदेव! आप और आप की यह पत्नी मूर्तिदेवी दोनों ब्राह्मण परिवारमें मनुष्यदेह धारण करेंगे और आप के यहाँ साक्षात् नारायण पुत्र-रुप में जन्म लेंगे। और वे ही आप दोनों को एवं इस ऋषिगण को मेरे शाप से मुक्त करायेंगे और आप सब की वे ही असुरोंके कष्ट से रक्षा करेंगे।'

इनमें से उद्धव रामानंद स्वामीके रुपमें प्रकट हुए, अन्य सारे ऋषि उनके शिष्योंके रुपमें प्रकट हुए और

धर्मदेव एवं मूर्तिदेवी अनुक्रमसे देवशर्मा अथवा हरिप्रसादके रूप में एवं भक्तिदेवी के रूप में जन्मे। हरिप्रसाद और भक्तिदेवी के यहाँ, सं. १८३७, चैत्र शुक्ला ९ (राम नवमी) के रोज रात्रि की दस घटिकाओंके बीतने पर, भगवान स्वामिनारायण संतान के रूपमें प्रकट हुए।

बराबर इसी वर्ष सं. १८३७ में, स्वामी रामानंदके एक शिष्य गोविंदराम रचित कलियुग के काव्य (गरबा) में नीचे की पंक्तियाँ मिलती हैं :

> करुणा करीने कृष्ण कलि मां प्रकट थाशे सुखदान जी रे,
> हरि हरिकृष्ण नामे के'वाशे पुरुषोत्तम भगवान रे,
> कलियुग आव्यो जी रे.

[सुखदाता श्रीकृष्ण कृपा करके कलियुग में प्रकट होंगे, भगवान पुरुषोत्तम हरि–हरिकृष्ण नामसे प्रख्यात होंगे, कलियुग आ रहा है।]

परिस्थिति में असंतोष था

सहजानंद स्वामी का जन्मस्थान अयोध्या से चौदह मील दूरका छपैया गाँव है। आज लखनऊ–गोरखपुर रेलवे लाईन पर 'छपैया स्वामिनारायण' नामक रेलवे स्टेशन भी है। तीर्थ के नाते इस स्थान की अनोखी महिमा है।

स्वामी सहजानंद का आयुष्यकाल १८ वीं शताब्दी की अंतिम दशाब्दी से लेकर १९वीं शताब्दी की प्रथम चार दशाब्दियों तक फैला हुआ है। सं. १८३७ में माने सन् १७८१ में अप्रैल महीनेकी ३ तारीखको स्वामी सहजानंद का जन्म हुआ था। उस वक्त रामकृष्ण परमहंसके जन्म को ५५ वर्ष की देर थी, राजा राममोहन राय उस वक्त दो–तीन साल के बालक थे, कवि

दयाराम अभी १२ सालके किशोर थे । गुजरात में वैष्णव धर्मका प्रावल्य था, लेकिन उस में प्रवेश करते भ्रष्टाचारके प्रति विचारशीलों में धीरे धीरे असंतोष पैदा हो रहा था । उसमें सामाजिक दृष्टिसे कोई विकासके चिह्न नहीं दिखाई देते थे । अनेक प्रकारके वहमों और संप्रदायों मे जनता बँट गई थी । कई प्रकारके देवताओंकी पूजा चल पड़ी थी । साधु-संन्यासी लोग फौजकी तरह हाथी और शस्त्रास्त्र लेकर घूमते थे और लोगों को डराते थे । भूत-प्रेत आदिके वहम तो थे ही । साथ साथ धर्मके हेतु दिये जानेवाले वलिदानोंका प्रमाण भी कम नहीं था ।

वालयोगीका गृहत्याग

ऐसे समयमें गुजरात से कई योजन दूर अयोध्याके पास पैदा हुए धनश्यामके हाथमें पद्मका चिह्न और पैरमें वज्र, ऊर्ध्व-रेखा एवं कमलचिह्न देखकर ज्योतिषियोंने कहा कि ‘यह वालक लाखों मनुष्योंका नियंता वनेगा ।’

पिता हरिप्रसादने अपने पुत्र धनश्यामको पाँच सालकी उम्रमें प्रथम अक्षर पढाया । आठ सालकी उम्रमें उनको यज्ञो-पवित दिया । अपनी शैशव अवस्थामें ही घनश्यामने सारे शास्त्रोंका अध्ययन समाप्त किया । केवल ग्यारह सालकी उम्रमें उनके माता-पिता अक्षरधाम सिधारे । तीनेक महीनेके वाद अपने भाईके उलहनेको निमित्त वनाकर सं. १८४९ अषाढ शुक्ल १० दशमीके दिन अपने सगेसंवंधियोंको विना कहे-सुने नित्यस्नानका वहाना वनाकर वैराग्यके तीव्र वेगसे घनश्याम घरद्वार छोडकर निकल पडे । सहजानंद स्वामी के शिष्यों द्वारा उनके अस्तित्व

दरम्यान ही किये गये उनकें वचनोंके संचय 'वचनामृत' की भूमिकामें इस बालयोगी का वर्णन इस तरह दिया गया है :

'वहिर्वास से युक्त लंगोट पहने हुए, मृगचर्म ओढे हुए, पलाशका दंड हाथ में लिये हुए, श्वेत यज्ञोपवीतधारी, नीलकंठ वर्णीके गले में दुगुनी तुलसीकी माला है, ललाट में ऊर्ध्वपुण्ड्र के साथ तिलक है, मस्तक पर जटा, कमर पर मुंज की मेखला, हाथ में जपमाला, कमंडलु, भिक्षापात्र और जल छानने का कपड़ा है। शालिग्राम और बालमुकुंदका बटुआ गले में और चार शास्त्रोंके सार का एक गुटका कंधे पर लटकाया है। ऐसे वेषधारी श्री नीलकंठ ब्रह्मचारी सरयू नदी तैरकर उत्तर दिशा की ओर जा रहे थे...'

भारतभर का तीर्थाटन

बारह साल की उम्रके घनश्याम इस गृहत्यागके बाद नीलकंठ वर्णी के नामसे पहचाने जाते हैं। इतनी छोटी उम्र में घर छोड़कर निकल पड़नेवाले इस बालक ने सारे भारतवर्ष को पैरों से नाप लिया। सात सालके परिभ्रमण दरम्यान वे गोपालयोगी से अष्टांग योग सीखते हैं, तीर्थयात्रा करते हैं, कई प्रकार के साधुओं–विरागियोंके संपर्क में आते हैं। जिनके पास सीखने–समझने योग्य कुछ होता है, उनसे अवश्य वे कुछ सीखते–समजते जाते हैं। 'ताजी भाजी को तोड़ते भी कष्ट हो' ऐसी कोमल वृत्तियोंका उन में विकास होता है। उत्तर में हिमालय तक पहुँचकर दक्षिण में कांची, श्रीरंगपुर, रामेश्वर तक वे जाते हैं। वहाँसे दक्षिण के तीर्थों में विचरण करते हुए नीलकंठ वर्णी पंढरपुर–नासिक होते हुए गुजरात में प्रवेश करते हैं।

गुजरात में आगमन

सं. १८५६ श्रावण कृष्णा षष्ठी के दिन नीलकंठ वर्णी मांगरोलसे दो कोस दूर 'लोज' गाँव में आ पहुँचते हैं। नीलकंठ वर्णीके एवं गुजरातके धार्मिक संप्रदायोंके इतिहास में यह महत्त्वपूर्ण दिवस है, क्योंकि योग्य गुरु और योग्य वातावरण की खोज में घूमते हुए नीलकंठ वर्णी को यहाँ स्वामी रामानंदके शिष्य स्वामी मुक्तानंद से परिचय हुआ।

स्वामी मुक्तानंद से मिलने के बाद, उनके गुरु रामानंद स्वामी से मिलने के लिये वे अधीर हो जाते हैं। उन्होंने स्वामी रामानंद को जो पत्र लिखा, उस में वे लिखते हैं कि 'जैसे चकोर चन्द्र को चाहता है, वैसे ही हम आप के दर्शन के लिये अति उत्सुक हैं, आप तुरंत दर्शन दें, वरन् हम आपके पास पहुँचेंगे।'

'नट तो अब आयेगा'

स्वामी रामानंद उन दिनों कच्छ में विचरण कर रहे थे। स्वामी रामानंद को श्रीकृष्ण का जब से साक्षात्कार हुआ था, तब से वे कहते रहते कि 'नट (अभिनेता) तो अब आयेगा, मैं तो उनके आगमन की डुगडुगिया बजा रहा हूँ।'

स्वामी रामानंद को जब उनका पत्र मिला तो भरी सभा में वे बोल उठे कि 'हम जिन की राह देख रहे हैं, वे आ पहुँचे हैं।'

उस समय सभा में पीछे की ओर (दीक्षा बाद निष्कुलानंद स्वामी के नाम से ख्यात) लालजी सुथार बैठे थे वे बोल उठे,

'ये नये आनेवाले (वर्णी) क्या हमारे संप्रदाय के साधु रामदास जैसे हैं?' स्वामीजीने कहा, 'रामदास तो क्या! उससे भी वडे हैं।' लालजी सुथारने फिर पूछा, 'तो क्या वे मुक्तानंद स्वामी की वरावरी के हैं?'

स्वामीजीने कहा, 'उनसे भी वडे।'

'तब तो वे आप जैसे ही होंगे?' लालजी सुथारने पूछा। स्वामीजीने कहा 'हम भी उनके आगे क्या हैं? हमसे भी वहुत वड़े।'

ताक भर दिया

रामानंद स्वामीने नीलकंठ वर्णी को स्वामी मुक्तानंद की आज्ञा में रहने का आदेश दिया। नीलकंठने उनकी इस आज्ञा का अक्षरशः पालन किया। साथ ही साधुओं की आचारसंहिता में क्रान्तिकारी परिवर्तन भी किया। मुक्तानंद स्वामी का जो आश्रम था, उसकी दीवाल के विल्कुल वगल में ही एक गृहस्थी का मकान था। दोनों मकानोंके वीच में ताक़ था। उसी ताक़ के द्वारा साधु आग की लेनदेन किया करते थे। इस प्रकार भी साधुवर्ग स्त्रियों के संपर्क में आवें, यह नीलकंठ को पसंद नहीं था। नीलकंठ ने कहा कि 'यह ताक़ (छिद्र) दीवाल में नहीं है, धर्म में है।' उन्होंने वह ताक़ भरवा दिया। आज भी उसकी निशानी वहाँ दिखाई देती है।

स्त्रियों की कथा अलग हुई

मुक्तानंद स्वामी रोजाना कथा करते थे। उनकी कथाके विषयमें कवि दलपतराम कहते हैं कि "हिमालयसे गंगा का

प्रवाह जैसे निकलता है, बस उसी तरह उनके मुँहसे कथा निकलती थी।' उनकी कथा सुनने के लिये स्त्रियाँ और पुरुष एक साथ बैठते थे। नीलकंठ को यह बात खटकी। वे मानते थे कि साधुओं को अष्टांग ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। मतलब कि इस प्रकार भी साधुओं को स्त्रियों के संसर्ग में नहीं आना चाहिये, स्त्रियों के सामने टकटकी लगाकर नहीं देखना चाहिये। नीलकंठ ने कहा कि, 'मैं पुरुषों की अलग सभा करूँगा, जो कथा सुनना चाहें वे आवें।' सारे पुरुष नीलकंठ की सभा में पहुँचे। मुक्तानंद स्वामी के सामने केवल स्त्रियों का समुदाय ही रहा। तब मुक्तानंद स्वामी अपनी पोथी समेटकर निर्मानीभाव से स्त्रियों से बोले, 'अब आप लोगों को आखिरी रामराम, अब हमारी कथा समाप्त हो गई। हम भी अब नीलकंठ की कथा सुनने को बैठेंगे।'

कथा अलग हुई इस से दूसरा भी एक लाभ यह हुआ कि स्त्रियों के मंदिर अलग बने, स्त्रियाँ ही स्त्रियों को कथा सुनाएँ, ऐसा निश्चय हुआ, उसका फल यह हुआ कि स्त्रियों में अक्षरज्ञान की चेतना पैदा हुई।

इस के बाद पीपलाणा गाँव में नीलकंठ की रामानंद स्वामी से भेंट हुई। वहीं नीलकंठ को दीक्षा दी गई, उसके ठीक एक साल के बाद उनको संप्रदाय का आचार्यपद दिया गया, जो कि हम इसके पहले पढ़ चुके हैं। सहजानंद स्वामी की आचार्य पद पर नियुक्ति के एकाद महीने के बाद रामानंद स्वामी अक्षरधाम निवासी हो गये।

मुक्तानंद का भ्रम टूट गया

सभी शिष्यों में सहजानंद स्वामी उम्र में छोटे थे। इसलिये सब उनको गुरु मान लें यह आसान नहीं था। रघुनाथ-

दास और हरवाई, वालवाई आदि तो संप्रदाय से अलग हो गये। मुक्तानंद स्वामी के दिल में भी सहजानंद स्वामी के सामर्थ्य के विषय में शंका थी। सहजानंद स्वामी अपनी अलौकिक शक्ति से अपने परिचय में आनेवाले लोगों को समाधि करवाते थे। इस शक्ति को देखकर भी मुक्तानंद स्वामी के दिल में श्रद्धा पैदा न हुई। कहते हैं कि एक वार रामानंद स्वामी ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर मुक्तानंद स्वामी से कहा कि 'मैं कहता था न कि, मैं तो डुगडुगिया वजानेवाला केवल हूँ। अभिनेता तो कोई दूसरा आयेगा, क्या तुम वह बात भूल गये हो?' इस दर्शन से मुक्तानंद स्वामी का भ्रम टूट गया, इतना ही नहीं, अपने हाथों से उन्होंने पुष्पमाला गूँथकर वह सहजानंद स्वामी को पहनाई और उनको दंडवत् प्रणाम करके उनसे क्षमा माँगी।

समाधि सुलभ बनाई

रामानंद स्वामी अक्षरधामवासी वने, उसके चौदह दिनों के बाद उन्होंने 'श्री स्वामिनारायण' महामंत्र का भजन-जप शुरू करवाया। जगह जगह पर सदाव्रत खुलवाये। महाराजने वडे वडे योगियों को दुर्लभ ऐसी समाधि हजारों मुमुक्षुओं को केवल दृष्टिमात्र से सुलभ बना दी और सब को अपने अपने इष्टदेव के दर्शन करवाए।

अपने प्रताप एवं ऐश्वर्य से काठी, कोली, दर्जी, बढ़ई, मेमार, कुम्हार आदि समाज के निम्नस्तर के लोगों का सभी प्रकार से उत्कर्ष किया। महाराज की संतमंडलियों ने गाँव गाँव घूमकर–विचरण कर लोगों को सदाचार के पाठ पढ़ाए।

आचारशुद्धि की प्रतिष्ठा की

स्वामी सहजानंद ने सब से पहला और बड़ा काम समाज में शुद्ध आचार की प्रतिष्ठा करने का किया। उनके भक्तों को पाँच वर्तमानों का पालन करने का निश्चय हुआ। उन में मद्य, माँस, चोरी, व्यभिचार और स्वधर्मत्याग के बारे में निषेध किया गया। लोग इस शुद्ध आचार की प्रतिष्ठा करनेवाले महापुरुष की पूजा करने लगे। फलस्वरूप, पाखण्ड पर आधारित कई लोगों के मठ ध्वस्त हो गये, लोगों की अंधश्रद्धा और वहम का लाभ लेकर जीनेवालों का व्यवसाय चौपट हो गया। ऊनके कुछ शिष्य स्वामिनारायण के साधु भी बन गये, अतः वे पाखंडियों स्वामिनारायण के साधुओं को परेशान करने लगे, मौका पाकर उन पर अत्याचार भी करने लगे।

कई प्रकार के शिष्य

सहजानंद स्वामी के प्रभाव के नीचे जैसे मुक्तानंद स्वामी एवं रामानंद स्वामी आए थे, उसी तरह और लोग भी आने लगे। रामानंद स्वामी के एकान्तिक भक्त लालजी सुथारने भी स्वामीजी से दीक्षा ली और वे निष्कुलानंद स्वामी कहलाए। लाडु बारोट दीक्षा लेकर ब्रह्मानंद स्वामी बने। पूर्वाश्रम में संगीत की अप्रतिम साधना करनेवाले प्रेमसखी प्रेमानंद भी स्वामीजी के ऐश्वर्य से प्रभावित हो कर आकर्षित हुए। मगनीराम नाम का एक सिद्ध अपने अहंकार का चोला उतारकर अद्वैतानंद नाम से स्वामीजी के शिष्यमंडल में जुड़ गये।

साधुओंका तपोमय जीवन

जैसे जैसे सहजानंद स्वामी का प्रभाव और प्रताप बढ़ता

गया वैसे वैसें विरागी और अन्य लोगों के द्वारा उनके साधुओं को विशेष त्रास पहुँचाया जाने लगा। साधुओं को कठोर व्रतों का पालन करना निहायत जरूरी था और वे लोग किसी भी प्रकार से उन व्रतों को खंडित करते थे। अतः उनको प्रायश्चित्त रूप में उपवास करने पड़ते थे। इन सब साधुओं को भागवती दीक्षा दी गई थी, इसलिये उनको कण्ठी, जनेऊ, पूजा आदि के नियमन थे। लेकिन सहजानंद स्वामीने एक ही रात में पाँच सौ साधुओं को कालवाणी गाँव में एकत्रित किया और उन्हें परम-हंस की दीक्षा दे दी। इस समय स्वामी सहजानंद की उम्र केवल इक्कीस साल की थी। अब साधुओं को कण्ठी, जनेऊ आदि से मुक्ति मिल गई और पूजा भी मानसिक ही हो गई। बाहरी नियमों के बन्धन यद्यपि टूट गये फिर भी इन साधुओं का तपोमय जीवन और भी दृढ हो ऐसे नये कुछ नियम उनके लिये सहजानंद स्वामीने बनाये।

स्वामीजी की अनासक्ति

सहजानंद स्वामी ने अपने शिष्यों के लिये जो कठोर व्रत–नियम रखे थे, वे ही व्रतनियम अपने आप के लिये भी रखे थे। शिष्य–सेवक लोग स्वामीजी को भावपूर्वक कुछ अर्पण करते तो उस का थोडा सा उपयोग कर के प्रसादी के रूप में उसे तुरंत वापस दे देते।

एक बार किसी काठीने सुंदर घोड़ा उन्हें भेट के रूप में दिया। स्वामीजीने दो चार दिन उसका उपयोग किया, कुछ शिष्यों ने कहा भी कि 'सारे सौराष्ट्र में इस की बराबरी का घोड़ा नहीं मिलेगा।' उसी दिन शाम को स्वामीजी उस घोड़े पर सवार होकर स्नान करने के लिये नदी पर गये। स्नान कर

लेने के वाद वहाँ खडे किसी ब्राह्मण के हाथ में घोडे की लगाम थमाकर 'श्रीकृष्णार्पण' कह दिया ।

शास्त्राभ्यासका आग्रह

सहजानंद स्वामी को लगा कि संप्रदाय की वृद्धि शास्त्रों द्वारा ही हो सकती है । इसलिये उन्होंने छोटे वड़े सभी साधुओंको अध्ययन करने की आज्ञा दे दी । इस आज्ञा के पालन में मुक्तानंद स्वामी जैसे वृद्ध साधुओं को भी मुक्ति नहीं दी थी । गोपालानंद, नित्यानंद, मुक्तानंद, शुकानंद, शतानंद, वासुदेवानंद आदि साधु उनके संस्कृत के अगाध ज्ञान के लिये प्रसिद्ध हैं ।

समाजजीवनके छिद्र बन्द किये

स्वामीजीने धर्मके छिद्र तो वन्द किये ही, समाजजीवन के भी छिद्र उन्होंने वन्द किये । गृहस्थों के, सधवा स्त्रियों के, विधवा स्त्रियों के और साधुओं के तथा आचार्यों के लिये उन्होंने अलग अलग नियम वनाए । सं. १८६९ में वड़ा भारी अकाल पड़ा; तव सहजानंद स्वामीने पीडितजनता की सहायता के लिये अपने शिष्यों को सौराष्ट्र में भेजा, उनको यह आदेश दिया कि भूखों को अन्नदान देते समय यह नहीं देखना कि वह सत्संगी है या नहीं । उन्होंने यज्ञों में अहिंसा स्थापित की । पशु-वलिदान देने की प्रथा वन्द करवाई । भयंकर लुटेरे एवं डाकू उनकी आँखों के अमी एवं आशीर्वाद पाकर गरीव गाय की तरह विनम्र होकर जीने लगे । सौराष्ट्र के असंख्य जुल्मी काठी सहजानंद स्वामी के परम शिष्य वन गये । इतना ही नहीं, स्वामीजी के एक ही वचन पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर देने के लिए वे हमेशा तैयार रहते । इन सव में

गढ़डा के दादा खाचर सर्वोच्च स्थान पर हैं । दहेजकी डरसे राजपूतों एवं काठियोंमें ताजी जन्मी हुई कन्याओंको, दूध में मुँह डुबोकर मार ड़ालने की जो प्रथा थी वह उन्होंने वन्द करवाई । शादी के समारोहों में वीभत्स गीत गाने की अपने सत्संगियों को मनाही की और अपने शिष्य स्वामी मुक्तानंद एवं स्वामी प्रेमानंद को राधाविवाह तथा रुक्मिणीविवाह के गीतों की रचना करने का आदेश दिया । शादी के समारंभों में ऐसे गीत गाने के लिये सत्संगियों को समझाया । सती वनने के रिवाज का उन्होंने कट्टर विरोध किया, इतना ही नहीं, उन्होंने ज्ञान, वैराग्य और भक्तिभाव से भरी पतिव्रता स्त्रियों को पति के पीछे जलकर मरने की अपेक्षा परमात्मा को ही पति मानकर उनका भजन करने का आदेश दिया । उन्होंने अपने सत्संगियों को यंत्र-मंत्र, भूत-प्रेतों की उपासना आदि पर विश्वास रखने का आदेश देते हुए कहा कि 'यदि यंत्र-मंत्र से कार्यसिद्धि हो सकती, तो लाखों रुपयों का खर्च सहकर राजा-महाराजा लोग सेना और युद्ध की सामग्री जो रखते हैं, तो वे ऐसा क्यों करते ? एक अच्छे मंत्रशास्त्री को रख लेते और यंत्र-मंत्र की सिद्धि के जरिये वे अपने सभी प्रतिस्पर्धियों का सफाया कर देते ।'

सहजानंद स्वामीने अपने शिष्यों के समक्ष अपने उदाहरण द्वारा संयम का आदर्श स्थापित किया । शिष्यों के वीच पैदा होते मतभेद मिटाये । वर्णाश्रमधर्म के पालन के लिये आग्रह रखा । लेकिन वर्ण और आश्रम के अभिमान द्वारा किसी वर्ण और आश्रम के व्यक्ति के तिरस्कार का निषेध किया ।

मंदिर बनवाये

धर्म के संगठन के लिये उन्होंने मंदिर बनवाने का संकल्प किया। तदनुसार गुजरातमें अहमदाबाद, गढ़डा, वडताल, जुनागढ़, भुज, धोलेरा आदि स्थानों पर शिखरबन्द मंदिर बनवाए। इन मंदिरों में शिल्पस्थापत्यकी दृष्टिसे कोई कमी न रह जाये, इस विषय में वे सावधान थे। इन मंदिरों के निर्माण में श्रम का गौरव हो ऐसा स्वामीजी का आग्रह था। गढ़डा के मंदिर के निर्माण के समय एक नियम सा बना दिया था कि प्रत्येक व्यक्ति नदी से स्नान करके आते समय अपने साथ एक पत्थर अवश्य उठाता आवे, स्वामीजी स्वयं भी स्नान करके आते समय एक पत्थर सिर पर लेकर ही आते थे। मंदिरों में राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, नरनारायण, धर्मदेव एवं भक्तिमाता तथा शिवपार्वती आदि की मूर्तियों की प्राणप्रतिष्ठा की। वडताल मंदिर में भगवान हरिकृष्ण के नाम से सहजानंद स्वामी की मूर्ति की भी साथ साथ स्थापना की गई।

प्रबन्धके लिये आचार्य परम्परा

शुरू शुरू में इन मंदिरों की व्यवस्था का काम त्यागियों को-संतों को सौंपा गया, लेकिन उन्होंने संतों को धन का स्पर्श करने की मनाही फरमाई थी। यदि वे धन के प्रबन्ध में लगें तो वैराग्य-त्याग के नियम का भंग होने की संभावना पैदा होगी, अत एव उन्होंने यह कार्य संभालने के लिये वासुदेवानंद ब्रह्मचारी को आचार्य पद पर नियुक्त किया, लेकिन वे इस काम में असफल रहे। उसके बाद सभी संत-हरिभक्तों के आग्रह से वे अपने परिवार के सदस्यों को अयोध्या से बुलाकर उन्हें यह कार्य सौंपने को तैयार हुए।

अपने दो भाई रामप्रतापजी और इच्छारामजी के पुत्र अयोध्याप्रसादजी और रघुवीरजी को अयोध्या से बुलाकर क्रम से अहमदावाद–नरनारायण देवकी तथा वड़ताल–लक्ष्मीनारायणदेव की गद्दी के आचार्य पद पर उनकी नियुक्ति की। इस आचार्य परम्परा के लिये भी एक विशिष्ट आचारसंहिता की उन्होंने योजना की।

सहजानंद स्वामीका देहोत्सर्ग

सहजानंद स्वामी ने गढ़डा में बीमारी ग्रहण की, इस अरसे में, उस समय के बम्बई राज्य के गवर्नर, सर जॉन माल्कम राजकोट की मुलाकात के लिये गये थे। सहजानंद स्वामी एवं उनके द्वारा किये गये सामाजिक कार्यों के बारे में उन्होंने काफी सुना तो था ही। उन्होंने सहजानंद स्वामी को मिलने के लिये राजकोट आने का आमंत्रण दिया। पहले तो अपनी अस्वस्थ प्रकृति के कारण स्वामीजीने आमंत्रण अस्वीकृत कर दिया, परंतु गवर्नर की ओर से अति आग्रह किये जाने पर सहजानंद स्वामी उनसे मिलने के लिये राजकोट पधारे। शिक्षापत्री की एक प्रति स्वामीजीने गवर्नर को भेंट के रूप में दी और करीब दो घण्टे तक सम्प्रदाय के बारे में उनसे बातचीत की। स्वामीजी ने कठोर व्रतनियम धारण कर रखे थे। उनकी तबीयत दिनोदिन बिगड़ती जा रही थी। यह समाचार सुनते ही सारे साधु एवं सत्संगी दौड़ेभागे गढ़डा पहुँच गये। सहजानंद स्वामी ने सब को बिखर जाने के लिये कहा, लेकिन कोई वहाँ से हटा ही नहीं। तब स्वामीजी ने यकायक बीमारी छोड़ दी। लोग समझ गये कि स्वामीजी अब बिल्कुल स्वस्थ हो गये हैं। दादा खाचर ने शक्कर बाँटी। सारे

साधु और सत्संगियोंने बिदा ले ली। ब्रह्मानंद स्वामीको जूनागढ़ भेजकर, वहाँसे अपने प्रिय पट्टशिष्य गुणातीतानंद स्वामीको अपने पास बुला लिया और दूसरे ही दिन सुबहमें स्नान और नित्यकर्मसे निवृत्त होकर पद्मासन लगाकर वे बैठ गये और उसी स्थिति में स्वधाम सिधार गये।

सहजानंद स्वामीका परिवार

श्री सहजानंद स्वामी स्वधाम सिधारे, तब पाँचसौ साधुओं, पाँच लाख सत्संगी कुटुम्बों, छः शिखरबन्द मंदिरों, असंख्य हरिमंदिरों, वचनामृत तथा शिक्षापत्री आदि शास्त्रों, दो आचार्यों, ज्ञानपूर्ण भक्तिमार्ग एवं संतोंके स्वरूपमें अपने प्राकट्य-को यहाँ छोड़ गये हैं। उनके शिष्योंकी उज्ज्वल परम्परामें जिनके नाम उल्लेखनीय हैं, ऐसे बहुत हैं। उनमें गुणातीतानंद, गोपालानंद, नित्यानंद, शुकानंद, शतानंद और मुकुंद ब्रह्मचारी तथा अष्टकवि-मुक्तानंद, निष्कुलानंद, प्रेमानंद, ब्रह्मानंद, देवानंद, दयानंद, भूमानंद और मंजुकेशानंद मुख्य हैं। इन अष्टकवियोंकी भक्तिपूर्ण रचनाए अलग अलग संग्रहोंमें छपी हैं और 'बृहद्काव्यदोहन'में भी संग्रहीत हैं। गुजराती भक्तिकविताकी धारामें स्वामिनारायण संप्रदायके कवियोंका भी विशिष्ट प्रदान है।

समन्वयकारी संप्रदाय

श्री सहजानंद स्वामीका जीवन ही स्वामिनारायण संप्रदायकी आचारसंहिताका जीता जागता व्याकरण है। कठोर अनुशासन और उत्कट प्रेम, इन दो अंतिमोंके बीच ही सहजानंद स्वामीका जीवन विकसित हुआ है। विशेषता यह है कि वे इन दोनों अंतिमोंका संतुलन रख सके थे।

श्री सहजानंद स्वामीके पृथ्वी पर प्रकट होनेके जो हेतु संप्रदायमें वताए गये हैं, उनमें मुख्य ये हैं :–

(१) इस ब्रह्माण्डमें अपनी सर्वोपरि शुद्ध उपासनाकी अच्छी तरह संस्थापना करना ।

(२) पूर्वावतारों एवं अपने भक्तोंको निजस्वरूपका ज्ञान कराके उनको अक्षरधामके अधिकारी वनाना ।

(३) धर्म, ज्ञान, वैराग्य और माहात्म्य युक्त भागवत धर्मकी स्थापना करना ।

(४) अनंत काल तक परब्रह्मकी प्राप्तिके लिये निष्काम भावसे तपव्रत करनेवाले योगियों और भक्तोंका कल्याण करना ।

(५) इस ब्रह्माण्डमें अक्षरधाम पहुँचानेके लिये परम एकान्तिक संतोंके द्वारा आत्यन्तिक कल्याण–मोक्षमार्ग का द्वार हमेशाके लिये खुला रखना ।

श्री सहजानंद स्वामीने नारायण (विष्णु) और शिवका एकात्मभाव वताकर शैवों और वैष्णवोंके वीच होते संघर्षको मिटाया । सांख्य, योग, वेदान्त और पंचरात्रके सहारे भगवानके स्वरूपका निर्णय बनाया । वौद्धोंके संयम और त्याग, जैनोंके तप और अहिंसा एवं संघभावना, खिस्ती धर्मकी सेवावृत्ति, इस्लाम धर्मकी श्रद्धा एवं संगठन और जरथुस्त धर्मकी पवित्रताका स्वीकारकर सच्चे अर्थमें वे समन्वयद्रष्टा बने ।

अद्वैतमतमेंसे साधनचतुष्टय और जीवनमुक्ति, विशिष्टाद्वैतमेंसे शरीर और शरीरीका सम्बन्धसिद्धांत और शरणागति, द्वैतमेंसे माहात्म्यज्ञानयुक्त भक्ति तथा शुद्धाद्वैतमेंसे भक्तिरीति एवं सेवारीतिका उन्होंने ग्रहण किया ।

शिक्षापत्री और वचनामृत

स्वामिनारायण संप्रदायके तत्त्वज्ञानको व्यक्त करनेवाले धर्मग्रन्थोंमें 'वचनामृत' एवं 'शिक्षापत्री' प्रधान हैं। 'वचनामृत' तो प्राचीन गुजराती गद्यका अप्रतिम नमूना है। सं. १८७६ से सं. १८८६ तककी एक दशाब्दी दरम्यान सहजानंद स्वामी द्वारा दिये गये सदुपदेश उनके शिष्योंने संकलित किये और उनकी संमति लेकर वे 'वचनामृत'के रूपमें प्रकट किये गये। यह ग्रन्थ, गुजराती भाषामें कितना बल है, एवं तत्त्वज्ञान जैसे कठिन विषयको आसानीसे समझानेकी उसमें कितनी ताकत है, इस बातकी प्रतीति कराता है।

अपने स्वरुपका ज्ञान

श्री सहजानंद स्वामीने प्रारंभमें लक्ष्मीनारायण एवं राधा-कृष्णकी पूजाकी महिमा की थी। उनके द्वारा स्थापित मंदिरोंमें भी इनकी और अन्य मूर्तियोंकी प्राणप्रतिष्ठा की थी। साथ साथ वे पूर्ण पुरुषोत्तम परब्रह्मस्वरूप हैं ऐसी निष्ठा उनके भक्तोंमें स्थिर हुई। फलस्वरूप उनके जीवनकालके दरम्यान ही वे भगवान स्वामिनारायण–परब्रह्म पूर्ण पुरुषोत्तमके रूपमें पूजे जाने लगे।

श्री सहजानंद स्वामीकी अपनी वाणीमें भी यह ध्वनि सुनाई दती है। यद्यपि यह बात सब स्वीकारें ऐसा आग्रह कभी उन्होंने नहीं रखा। गढ़डा–मध्यके १३वें वचनामृतमें उन्होंने अक्षरातीत भगवान पुरुषोत्तमकी तेजमूर्तिका वर्णन किया है, और बादमें श्रद्धाके अनोखे स्वरमें वे कहते हैं:

'और उस तेजमें जो मूर्ति है, वही यह प्रत्यक्ष महाराज हैं, ऐसा समझना और यदि ऐसा समझमें न आए तो, इतना

जरूर समझना कि अक्षररूप जो तेज है, उसमें जो मूर्ति है, उसे महाराज देखते हैं, यदि इतना भी आप लोग समझ लेंगे तो भी आप लोगोंका मुझ पर प्रेम रहेगा, इससे आप लोगोंका कल्याण होगा; यह वात नित्य नूतन समझना ।'

वे स्वयं जो कहते हैं, वह शास्त्रोक्त तो है ही, लेकिन उसके साथ उनका प्रत्यक्ष अनुभव भी मिला हुआ है, इस लिये वे जो कहते हैं, वह दृढतापूर्वक कहते हैं :

'हमने अपनी आँखोंसे प्रत्यक्ष देखकर यह वात कही है, यदि प्रत्यक्ष देखकर न कही हो तो हमको सभी परमहंसोंकी सौगंद है ।'

रामानुजका तत्त्वज्ञान अनुकूल

श्री सहजानंद स्वामीने स्वामिनारायण संप्रदायकी नींवमें जिस तत्त्वज्ञानको विकसित किया है, उसका मूल रामानुज तत्त्व-ज्ञानमें है । हम लोग श्रीजी महाराजके ही शब्द देखें तो :

'और इन सब बातोंके विषयमें हमारा जो अभिप्राय है, वह हम संक्षेपमें कहे तो, जिस तरह शंकर स्वामीने अद्वैत ब्रह्मका प्रतिपादन किया है, उस पर तो हमारी रुचि नहीं है और रामानुज स्वामीने जिस प्रकार क्षर–अक्षरसे पर जो पुरुषोत्तम भगवान है, उसका निरूपण किया है, उस भगवान पुरुषोत्तमकी हमारी उपासना है और उनके प्रति गोपियोंकी तरह हमारी भक्ति है और शुकदेवजी तथा जडभरतकी तरह ही हमारा वैराग्य और आत्मनिष्ठा है ।'

चारों शास्त्रोंसे समझमें आए, एकसे नहीं

श्री सहजानंद स्वामीका मुख्य निश्चय तो यह था कि

भगवान और भगवानके कोई भी भक्तके अवगुण नहीं लेना। रामानुजके सिद्धांत पर उनकी श्रद्धा थी, परंतु इसके कारण उन्होंने अन्य सिद्धांतोंकी कभी अवगणना नहीं की। वे तो सांख्य, योग, वेदान्त और पंचरात्र–इन चारों शास्त्रों द्वारा भगवानके स्वरूपको पहचाननेका अनुरोध करते हैं। वे गढ़डा–प्रथमके बावनवें वचनामृतमें पूरी इस विचारधाराको स्पष्ट करते हुए कहते हैं :–

'सांख्यशास्त्र भगवानको २५वाँ (तत्त्व) मानता है। जीव, ईश्वर सहित जो २४ तत्त्व हैं, उनको वह क्षेत्र कहता है। और २५ वें जो भगवान हैं, उन्हें क्षेत्रज्ञ कहता है। योगशास्त्र भगवानको २६वाँ तत्त्व कहता है और वह मूर्तिमान है ऐसा भी बताता है। जीव और ईश्वरको २५ वाँ तत्त्व मानता है। २४ तत्त्व जो इससे भिन्न हैं, उनके द्वारा अपनी आत्माको अलग मानकर भगवानका ध्यान करनेका वह आदेश देता है। वेदान्त शास्त्र भगवानको सर्वव्यायक, सर्वाधार, निर्गुण, अद्वैत, निरंजन, कर्ता होते हुए भी अकर्ता, प्राकृत विशेषणोंसे रहित, दिव्य विशेषणोंसे सहित बताता है। पंचरात्र-शास्त्र श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम नारायणको ही भगवान मानता है। और बताता कहता है कि नव प्रकारोंसे जो भगवानकी भक्ति करता है, उसका कल्याण होता है.........।'

इन चारों शास्त्रोंमेंसे किसी एक शास्त्रके मतको माननेवाला किसी प्रकार धोखा खा जाता है। वह बात अच्छी तरह समझाते हुए वे आगे चलकर कहते हैं : 'इन सभी शास्त्रोंके द्वारा भी यदि भगवानको नहीं समज सकते तो ऐसे दोष आते हैं। और यदि सभी शास्त्रोंके द्वारा भगवानको समजों तो, एक शास्त्रके समझनेसे जो दोष आता है, वह दूसरे शास्त्रके ज्ञानसे टल जाता है।

इसलिये चार शास्त्रों द्वारा भगवानको जो समझता है, वह परिपूर्णज्ञानी है। जो चार शास्त्रोंको छोड़कर अपने मनकी कल्पनासे किसी भी तरह शास्त्रको समझ लेता है, और वह यदि वेदान्ती है अथवा उपासनाशील है, वे दोनों भ्रममें पडे हैं, दोनोंमेंसे किसीको भी कल्याणका मार्ग मिला नहीं है।'

आत्मनिष्ठा, प्रीति, दृढ वैराग्य और स्वधर्म इन चारों गुणोंको भी एक दूसरेकी कितनी अपेक्षा है, यह श्रीजी महाराज वचनामृतमें अच्छी तरह समझाते हैं। 'एकान्तिक भक्त किसे कहा जाय, उसका विवेचन करते हुए वे कहते हैं: 'जिसमें सिवा भगवानके, दूसरे किसी भी पदार्थकी वासना न हो, जो अपनेको ब्रह्मरूप मानकर भगवानकी भक्ति करता हो वह एकान्तिक भक्त कहा जाता है।' उसके बाद वे कहते हैं कि 'एकान्तिक धर्म तो जो निर्वासनिक हो और जिसकी भगवानमें स्थिति हो गई हो, उसके वचन द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। ग्रन्थमें लिख रखा हो, उससे कभी एकान्तिक धर्मकी प्राप्ति नहीं होती।'

साक्षात्कारका मार्ग

साक्षात्कारका सीधा मार्ग श्री सहजानन्द स्वामी बताते हैं। श्रवण, मनन, निदिध्यासन और साक्षात्कारका तवक्का उनकी तरह किसीने भी सरलतासे स्पष्ट किया हो ऐसा नहीं लगता। हम यहाँ यह विषय ब्योरेवार देखें :

"कानसे वार्ता सुनें, मनके द्वारा उसका विचार करें, जितना अंश छोडने योग्य हो उसे छोड दें, ग्रहण करने योग्य हो उतना अंशका ग्रहण करे, इसे मनन कहते हैं। निश्चयपूर्वक मनके द्वारा ग्रहण किये हुए अंशको रातदिन याद किया जाये वह है निदिध्यासन। विना चिंतन किये भी सर्व वार्ता मूर्तिमानकी तरह, जैसी की तैसी, 'इदं' याद आ जाये उसे साक्षात्कार कहा जाता है।"

'सत्पुरुषमें दृढ प्रीति यही आत्मदर्शनका साधन है और सत्पुरुषकी महिमा जाननेका भी यही साधन है और परमेश्वरके साक्षात् दर्शनका भी यही साधन है।' इस प्रकार सत्पुरुषके द्वारा साक्षात्कारका मार्ग सरल बनाया है।

भगवान अथवा संतका आश्रय

भगवानका प्राकट्य पृथ्वी पर हमेंशा रहता है, ऐसा सहजानंद स्वामी कहते हैं। 'जब भारतवर्षमें मनुष्यदेह मिलती है तब भगवानका अवतार अथवा भगवानके साधु अवश्य पृथ्वी पर विचरण करते ही होते है, जीवको उसकी यदि पहचान हो जाये तो वह जीव भगवानका भक्त हो जाता है।'

इस सिद्धांतके समर्थनमें वे स्वयं ऐसा भी कहते है कि 'भगवान जब पृथ्वी पर प्रत्यक्ष न हों तब भगवानसे भेंट किये हुए (भगवानके गुणोंके धारक) जो साधु हो उसका आश्रय करना चाहिये। तो उससे भी जीवका कल्याण होता है।'

यहाँ उन्होंने 'परम एकान्तिक साधुका उल्लेख किया है, जो धर्म, ज्ञान, वैराग्य आदि शुभ गुणोंसे युक्त हो और ब्रह्मरूप होकर भगवानकी भक्ति करता हो।

अखंड वृत्ति कठिन साधन है

उसी तरह श्रद्धा, विश्वास, प्रीति और माहात्म्य आदि एक-दूसरेकी अपेक्षा, किस प्रकार है यह भी वे स्पष्ट करते हैं :–

'सभी साधनों में कौन सा साधन कठिन है?' इस प्रश्नका उत्तर देते हुए वे कहते हैं, 'भगवानके स्वरूपमें मनकी अखंड

वृत्ति रखना, इससे विशेष कठिन दूसरा कोई साधन नहीं है, और उससे कोई विशेष लाभ भी नहीं है।' यह अखण्ड वृत्ति किस प्रकार रखी जा सकती है, इसका ज्ञान देते हुए वे कहते हैं, 'कुछ देर कभीं एकाग्रचित्त बैठकर भगवानका भजन करे और थोडी ही देरके बाद इधरउधरकी प्रवृत्तियाँ करे तो उसको वह स्थिति प्राप्त नहीं होती, जैसे एक घड़ाभर पानी किसी जगह उँडेल दिया जाय, उसके दो या तीन दिन बाद फिर वहाँ और एक घड़ाभर पानी उँडेल दे, तो इससे खड्डा पानीसे भरेगा नहीं, क्योंकि पहले दिनका पानी पहले दिन ही और दूसरे, तीसरे दिनका पानी दूसरे या तीसरे दिन ही सूख जायेगा, लेकिन अंगुलिकी तरह पानीका पतला प्रवाह यदि सतत बहता हो तो बड़ा भी खड्डा भर जाता है। उसी तरह खाते, पीते, चलते, फिरते, शुभ–अशुभ सभी क्रियाओंके समय सदैव भगवानमें अखंड वृत्ति रखनी चाहिये।'

इसी विषयको और विस्तृत करते हुए वे कहते है : 'भगवानका निश्चय और माहात्म्यरूपी खटाई चढ़ जाये उसके चारों अन्तःकरण एवं दसों इन्द्रियँारूपी डाढें इमला जाती है।'

मूर्तिकी उपासना, भगवानकी भक्ति, भगवानका नामस्मरण और धर्म, इन चारोंकी महिमा भी श्री सहजानंद स्वामीने समझाई है। मायाकी बातको अपने तरीकेसे समझाते हुए वे कहते हैं, 'भगवानका भक्त हो, उसे भगवानकी मूर्तिका ध्यान करते वक्त जो बीचमें आकर आवरण करता है, वह माया है।'

समझदारीकी आवश्यकता

सहजानंद स्वामी अपने उपदेशोंमें गहनसे गहन तत्त्व-दर्शनको लोकभाषामें व्यक्त कर सकते हैं। बिना समझदारीका वैराग्य,

और प्रीति एवं समझदारीके साथका वैराग्य और प्रीति के बीच जो फर्क है वह उन्होंने अयत्न्त कवित्वमय, फिरभी अज्ञानी में भी अज्ञानी समझ सकें इस तरह प्रकट किया है :–

'अग्निकी बडी भारी ज्वाला हो और ऊपरसे यदि जल वरसे तो वह तुरंत बुझ जाती है, बिजलीकी अग्निकी चमक थोडी होती है, वह बादलोंके बीच रहती है, फिरभी बुझती नहीं है, उसी तरह बिना समझदारीका वैराग्य चाहे वडा भी हो अथवा भगवानमें ऐसी प्रीति हो तो वह अग्निकी ज्वालाकी तरह कुसंगरूपी जलसे उसका नाश हो जाता है और समझदारीके साथ हुआ वैराग्य अथवा प्रीति बिजलीकी आगकी तरह है, वह भले थोडी हो, उसका नाश नहीं होगा।'

थोडा भी क्रोध दुःखदायी

उसी तरह थोड़ासा क्रोध पैदा हो जाय और वह टल भी जाये तो ऐसा क्रोध नुकसानदेह है कि नहीं, ऐसे प्रश्नके उत्तरमें सहजानंद स्वामीने कहा कि 'जैसे यह सभा बैठी है, उसमें अभी साँप निकल आए, यद्यपि वह किसीको काटे नहीं; फिर भी सव उठकर भागने लगेंगे, सभीके दिलमें भय पैदा होगा ही; गाँवके सिवानेमें शेर दहाड़ने लगे, वह किसी पर आक्रमण न करे फिर भी सबके दिल कांप उठेंगे, कोई घरके बाहर निकलेगा नहीं, उसी तरह थोड़ासा भी क्रोध अतिशय दुःखदायी है।'

जीव-ईश्वर-माया-ब्रह्म-परब्रह्म

उन्होंने जीव, ईश्वर, माया, ब्रह्म और परब्रह्म इन पाँचोंके

स्वरुप 'शिक्षापत्री' एवं 'वचनामृत'में समझाकर सर्वोच्च तत्त्वज्ञान दिया है।

जीव : जीव हृदयमें रहता है, वह अणु जैसा सूक्ष्म है। चैतन्यरूप और ज्ञानमय है, समग्र शरीरमें व्याप्त है। अच्छेद्य, अजर और अमर है।

ईश्वर : ईश्वरको महामायाका बंधन है। विराट्, सूत्रात्मा और अव्याकृत ये तीन उसके शरीर है। उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय ये तीन उसकी अवस्थाएं है। ईश्वर अनन्त है। इन सबको परब्रह्मकी उपासना है।

माया : माया त्रिगुणात्मिका एवं अन्धकाररुप है। श्रीकृष्ण भगवानकी वह शक्ति है। जीवको, देह तथा देहके संबंधियोंमें अहंता-ममता पैदा करानेवाली है।

ब्रह्म : ब्रह्म अर्थात् अक्षर-सच्चिदानंद स्वरुप है, वह कूटस्थ है। अक्षरके दो रुप है। एक साकार, जो सदा पुरुषोत्तम नारायणकी सवामें अखंड रहता है। दूसरा निराकार, एकरस चैतन्य, जो भगवानका धाम है। धामरुपसे वह अनंत कोटि ब्रह्मांडको एवं मुक्तोंको अपनेमें धारणकर रहा है।

परब्रह्म : परब्रह्म पुरुषोत्तम सदा साकार, सर्वोपरि, कर्ता और सर्वज्ञ है। अनंत दिव्य गुणोंसे युक्त तथा मायिक गुणों-से मुक्त है। उसका शरीर दिव्य है, वह सबका नियंता है और सबके हृदयोंमें अन्तर्यामी रुपसे रहता है। वह जीव, ईश्वर, माया और ब्रह्मका आधार है।

मान्य शास्त्र और साधन

सहजानंद स्वामी परब्रह्मके साकार और द्विभुज रुपको

मानते हैं । चार वेद, व्याससूत्र, श्रीमद् भागवत, विष्णुसहस्र-नाम, श्रीभगवद्गीता, विदुरनीति, (स्कन्दपुराणस्थ) वासुदेव-माहात्म्य और याज्ञवल्क्य स्मृति, ये उनके मान्य सत्शास्त्र हैं। उनके बताये मुक्तिके साधनोंमें ज्ञान, उपासना, भक्ति, सत्संग, धर्म, आत्मनिष्ठा, वैराग्य आदि मुख्य हैं । इन साधनोंमेंसे किसी केवलएक साधनका आश्रय नहीं करना चाहिये । ये सारे साधन एकदूसरेकी अपेक्षा रखते है। ऐसे साधनोंकी महिमा समझनेकी उनकी आज्ञा है।

गुरुपरंपरा

गुरु परंपराका प्रारंभ उद्धवावतारी श्री रामानंद स्वामीके मानसगुरु श्री रामानुजाचार्यसे होता है। श्री रामानंद स्वामीके बाद क्रमसे श्री सहजानंद स्वामी, अक्षर मूर्ति श्री गुणातीतानंद स्वामी, श्री प्रागजी भक्त श्री यज्ञपुरुषदासजी, श्री ज्ञानजीवन-दासजी, और फिलहाल श्री नारायणस्वरूपदासजी (प्रमुख स्वामी) इस परंपरामें आये हैं।

सभी सद्गुरुओमें स्वामीजी विराजमान

श्री गुणातीतानंद स्वामीमें श्री सहजानंद स्वामी साक्षात् विराजमान है ऐसी निष्ठा उनके भक्तजनोंमें बँध गई है । इस परंपराके सभी सद्गुरुओमें क्रमशः यह निष्ठा परिपक्व बनी।

श्री गुणातीतानंद स्वामीके अनुगामी श्री प्रागजी भक्त (भगतजी महाराज), उनके शिष्य स्वामी यज्ञपुरुषदासजी (शास्त्रीजी महाराज), उनके शिष्य स्वामी ज्ञानजीवनदासजी (योगीजी महा-राज), उनके अनुगामी श्री नारायणस्वरूपदासजी (प्रमुख स्वामी) इन सब में श्रीजी महाराज साक्षात् निवास करते है, ऐसी भावना भक्तजनों में यथावत् सुरक्षित है।

ब्रह्मरूप होकर भक्ति की जाये

ब्रह्मरुप हो कर ही परब्रह्म–पुरुषोत्तमकी भक्ति करनेकी बात श्री सहजानंद स्वामीने शिक्षापत्री एवं वचनामृतके द्वारा साग्रह समझाई है। शिक्षापत्रीके ११६ वें श्लोकमें वे कहते हैं, 'तीन देहों, तीन अवस्थाओं, तीन गुणोंसे पर ब्रह्मरुप होकर भगवानकी भक्ति करनी चाहिये।' उसी तरह वचनामृतके लोया प्रकरणके सातवें वचनामृतमें भी वे दृढतापूर्वक कहते हैं, 'जो ब्रह्मरुप होता है उसे ही पुरुषोत्तमकी भक्तिका अधिकार है।'

इस प्रकार परब्रह्म पुरुषोत्तमके रुपमें अपने स्वरुपका ज्ञान, प्रसंगोचित संप्रदायमें देकर श्री सहजानंद स्वामीने अक्षरब्रह्म-रुपसे सद्गुरु श्री गुणातीतानंद स्वामीकी महत्ता भी बताई है, जिस अक्षरब्रह्मके संबंधसे जीव ब्रह्मरुप होकर परब्रह्मकी उपासना करता है। इस प्रकार ब्रह्मस्वरुप गुरुमें श्रीजी महाराजका प्राकट्य मानकर ही सब भकित करते हैं।

इसलिये अक्षरपुरुषोत्तमके उपासक हरिभक्त सहजानंद स्वामीको सर्वावतारी पूर्ण पुरुषोत्तम तथा श्री गुणातीतानंद स्वामीको मूल अक्षरब्रह्मके अवतार मानकर पूजते हैं। इस उपासनाका प्रवर्तन स्वामीश्री यज्ञपुरुषदासजीने अक्षरपुरुषोत्तमके मंदिर बनवाकर किया है।

संप्रदायका वर्तमान विस्तार

अक्षरपुरुषोत्तम–स्वामिनारायणके आठ शिखरबंधी मंदिर, करीब सौ हरिमंदिर, ढाईसौ सन्त एवं पार्षद, अफ्रीकामें आठ मंदिर, इँग्लेन्डमें पाँच मंदिर, अमरीकामें एक मंदिर और केनेडामें एक मंदिर है।

पढने योग्य ग्रन्थोंकी सूचि

श्री स्वामिनारायण संप्रदायकी विशेष जानकारीके लिये निम्नोक्त ग्रंथ पढने चाहियें : **श्री सहजानंद स्वामी** : वचनामृत, शिक्षापत्री एवं श्रीजीके प्रसादीरुप पत्रपुंज और वेदरस, **गुणातीतानंद स्वामी**: स्वामीकी वातें; **गोपालानंद स्वामी** : दशोपनिषद् भाष्य (सं.) गीताभाष्य (सं.) श्रीमद् भागवत भाष्य (सं.) मुक्तानंद स्वामी रचित वेदान्तसूत्र भाष्य पर प्रदीपिका (सं.) गोपालानंद स्वामीकी वातें; **नित्यानंद स्वामी** : श्री हरिदिग्विजय (सं.) शांडिल्यसूत्र भाष्य (सं.); **मुक्तानंद स्वामी** : ब्रह्ममीमांसा (सं.) मुक्तानंद काव्य (गुज.); **शुकानंद मुनि** : सत्संगिजीवन (सं.) हरिवाक्य सुधासिंधु [वचनामृतका संस्कृत स्वरुप] **ब्रह्मानंदस्वामी**: ब्रह्मानंद काव्य, ब्रह्मविलास, सुमति प्रकाश, उपदेश चिन्तामणि, **निष्कुलानंद स्वामी** : भक्तचिन्तामणि, निष्कुलानंद काव्य (बाईस ग्रन्थ); **प्रेमानंदस्वामी** : प्रेमानन्द काव्य, हरिचरित्रामृत, विवेकसार; **देवानंद स्वामी**: देवानंद काव्य **विहारीलालजी महाराज** :हरिलीलामृत; **अचित्यानंद ब्रह्मचारी** हरिलीला कल्पतरु; **भूमानंद स्वामी**: घनश्यामलीलामृतसागर; **आधारानंद स्वामी** : श्री हरिचरित्रामृत सागर; **किशोरलाल मशरुवाला** : श्री सहजानंद स्वामी

विशेष

अक्षरमूर्ति गुणातीतानंद स्वामीका जीवनचरित्र
श्री प्रागजी भक्तका जीवन चरित्र
स्वामीश्री यज्ञपुरुषदासजीका जीवन-कवन

बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्था

भगवान स्वामिनारायणके द्वारा प्रबोधित 'अक्षर-पुरुषोत्तमकी उपासना, अर्थात् स्वयं अक्षररुप होकर पुरुषोत्तमकी भक्ति करना' इस सनातन सिद्धान्तके प्रवर्तनके लिये ब्रह्मस्वरुप स्वामीश्री यज्ञपुरुषदासजी (शास्त्रीजी महाराज)ने सं. १९६२ में ईस संस्थाकी स्थापना की।

उन्होंने उपासना के प्रसार के लिये शिखरबद्ध मंदिरोंका निर्माण करके उनमें भगवान स्वामिनारायणकी उनके परम भक्त गुणातीतानंद स्वामी के साथ अर्थात् पुरुषोत्तमकी अक्षरके साथ मूर्ति प्रतिष्ठित की।

उनके अनुगामी स्वामीश्री योगीजी महाराजने, निर्दोष संतप्रतिभा एवं निःस्वार्थ प्रेमभावके द्वारा, असंख्य मनुष्योंको- विशेषतः युवावर्गको धर्माभिमुख किया, समाज में विलुप्त होती सी धर्मश्रद्धा को पुनर्जीवन दिया, देश-विदेशोमें अनेक संस्कार केन्द्रोंकी स्थापना की।

वर्तमानकालमें उनके अनुगामी स्वामीश्री नारायणस्वरुपदासजी (प्रमुख स्वामी) उसी कार्यक्रमको विशेष विस्तृत कर रहे हैं। अकाल एवं संकट-ग्रस्त पीडितों को राहत, विद्यार्थीयों को शैक्षणिक सहाय, वैद्यकीय सहाय, आदिवासी एवं पिछडी जातियों में संस्कार सिंचन, दवाखाना, संस्कृत-संगीत पाठशाला, हाईस्कूल, गुरुकुल, साहित्य प्रकाशन, कला-उत्तेजन, मंदिर-निर्माण, संस्कार-केन्द्रोंका संस्थापन-इत्यादि अनेकविध लोकोपकारक प्रवृत्तियां से प्रमुख स्वामी समाजको भक्तिरससे नवपल्लवित रख रहे हैं।

अक्षरपुरुषोत्तम विषयक तत्त्वज्ञानको वेदादि शास्त्रोका पूरा आधार हैं, इसलिये इसमें दिव्यता और आकर्षण है। यह प्रेमका आध्यात्मिक जागृतिका तथा साधनाका राजमार्ग हैं।

निर्भय और निःशंक होंकर आइये, भगवान स्वामिनारायण हम सब पर आशीर्वाद बरसा रहे हैं।

"हिन्दुस्तान में अनेक धर्म हैं, किन्तु स्वामिनारायण संप्रदाय शुद्ध और आकर्षक है। मुझे इस धर्मकी ओर ज्यादा आदर है।"

—महात्मा गांधी

"पीडित जातिओंके अविकसित मनुष्यों के जीवन पशु–कोटि-मेंसे उच्च कोटिमें लाकर उनको संस्कारी करने में संप्रदायका प्रदान महत्त्वपूर्ण रहा है।"

—सरदार वल्लभभाई पटेल

"ऊनके प्रतापसे गुजरात में निम्न स्तरके लोगोंका अस्तित्व ही मिट गया। उन्होंने अधमोंका सच्चा उद्धार किया था"

—कनैयालाल मा. मुनशी

भगवान स्वामिनारायण द्विशताब्दी महोत्सव

विविध प्रकाशन

१.	वचनामृत	(मुद्रणमें)
२.	भगवान स्वामिनारायण (सचित्र)	४–००
३.	शिक्षापत्री (सचित्र)	२–००
४	शिक्षापत्री	१–००
५.	वचनामृत बिन्दु	००–७५
६.	भगवान स्वामिनारायण (ले. हरीन्द्र दवे)	००–६०
७.	भगवान स्वामिनारायण–संगीत कलाके परिपोषक	"
८.	संप्रदायका विकास एवं गुरुपरंपरा	"

साहित्यक्षेत्रके सिद्धहस्त लेखकोंके द्वारा अन्य पुस्तिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं।

: प्रकाशक :

बोचासणवासी श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्था

शाहीबाग रोड, अहमदाबाद-३८०००४.

आवरण • दीपक प्रिन्टरी • अहमदाबाद ३८० ००१